CHETANA
INTERNATIONAL JOURNAL OF EDUCATION (CIJE)
Peer Reviewed/Refereed Journal
(ISSN: 2455-8729 (E) / 2231-3613 (P))
Impact Factor
SJIF 2023 - 7.286

Prof. A.P. Sharma
Founder Editor, CIJE
(25.12.1932 - 09.01.2019)

First draft received: 12.06.2023, Reviewed: 18.06.2023, Accepted: 26.06.2023, Final proof received: 30.06.2023

विकास की अवधारणा : हिन्द स्वराज और उत्तर गांधी परिदृश्य

महेश कुमार
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग
राजकीय कला महाविद्यालय सीकर
Email- Maheshbhaskar1@gmail.com, Mob-9414441475

सारांश

विकास शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया जाता है। सामान्यतः किसी भी स्थिति में बदलाव विकास कहलाता है। यह परिवर्तन की उस गति को दर्शाता है जिसके अन्तर्गत एक अवस्था दूसरी अवस्था का स्थान लेती हुई आगे बढ़ती है। यह मूल्यपरक अवधारणा है। हर परिवर्तन से विकास नहीं होता बल्कि जब परिवर्तन एक निश्चित लक्ष्य कर ओर नियोजित ढंग से होता है, तो इसे विकास कहते हैं। यह एक बहुआयामी अवधारणा है उसके अनेक पहलु हैं। जैसे – कृषि, व्यापार, उद्योग, स्वास्थ्य, शिक्षा इत्यादि। इसी के साथ कमजोर वर्गों, महिलाओं, बीमारों, बुजुर्गों, बेरोजगारों तथा अल्पसंख्यकों के कल्याण को रखा जाता है।

मुख्य शब्द : *उपभोक्तावाद, सामाजिक न्याय, अंत्योदय, मशीनीकरण, जलवायु परिवर्तन आदि.*

विकास शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया जाता है। सामान्यतः किसी भी स्थिति में बदलाव विकास कहलाता है। यह परिवर्तन की उस गति को दर्शाता है जिसके अन्तर्गत एक अवस्था दूसरी अवस्था का स्थान लेती हुई आगे बढ़ती है। यह मूल्यपरक अवधारणा है। हर परिवर्तन से विकास नहीं होता बल्कि जब परिवर्तन एक निश्चित लक्ष्य कर ओर नियोजित ढंग से होता है, तो इसे विकास कहते हैं। यह एक बहुआयामी अवधारणा है उसके अनेक पहलु हैं। जैसे – कृषि, व्यापार, उद्योग, स्वास्थ्य, शिक्षा इत्यादि। इसी के साथ कमजोर वर्गों, महिलाओं, बीमारों, बुजुर्गों, बेरोजगारों तथा अल्पसंख्यकों के कल्याण को रखा जाता है।

"विकास वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत कोई प्रणाली या संस्था अधिक सुदृढ़, विशाल, व्यवस्थित, कार्यकुशल प्रभावशाली तथा संतोषजनक रुपधारण कर लेती है। इनमें कुछ लक्षण या इनसे मिलते जुलते लक्षण भी विकास का संकेत देते है। समकालीन समाजविज्ञान के अन्तर्गत विकास की संकल्पना संपूर्ण मानव जीवन की गुणवत्ता को उन्नयन करने की प्रक्रिया का संकेत देती हैं।इसकी मुख्य तीन विशेषताएँ मानी जाती हैं – लोगों के रहन सहन के स्तर का उन्नयन जैसे कि उनकी आय में वृद्वि, भोजन, चिकित्सा सेवाओं और शिक्षा के स्तर में सुधार। किसी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक प्रणाली एवं सस्थाओं की स्थापना, जो मानव गरिमा और सम्मान को बढावा दे ताकि लोगों में आत्मसम्मान की भावना विकसित हो सके। उपभोक्ता वस्तुओं ओर सेवाओं में विविधता का विस्तार ताकि उपयोग के क्षेत्र में लोगो के लिए चयन की स्वतंत्रता को बढाया जा सके ''।[1] एक अन्य अर्थ में 'विकास का संबंध मानव की केवल भौतिक आवश्यकताओं से ही नहीं अपितु उसके जीवन की सामाजिक दशाओं की उन्नति से है। विकास का अर्थ केवल वृद्वि नहीं है। बल्कि उसमें सामाजिक, संस्कृतिक, संस्थागत आर्थिक परिवर्तन भी सम्मिलित है'।[2]

विकास वस्तुतः जनसामान्य को सुलभ स्वातन्त्र्य प्रसार संवर्धन की प्रक्रिया का नाम है। मानवीय स्वातन्त्र्य पर यह आग्रह विकास की अवधारण को बहुत ही विस्तृत स्वरुप प्रदान कर देता है जबकि संकीर्ण दृष्टि से इसे सकल राष्ट्रीय उत्पाद या तकनीकी प्रगति या समाज के आधुनिकीकरण तक ही सीमित कर दिया जाता है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन विकास को मात्र राष्ट्रीय उत्पाद या तकनीकी प्रगति आदि में निहित नही मानते बल्कि वे वंचितों की वास्तविक मुक्ति की बात करते हैं, जो उसे गरीबी भूख अशिक्षा अस्वास्थ्य, वंचना आदि सामाजिक बुराइयों से निजात दिलाता है'।[3]

इस प्रकार विभिन्न विद्वान विकास को अपने अपने नजरिये से देखते हैं कोई उसे आर्थिक दृष्टि से देखता है कोई इसके सामाजिक सरोकारों को महत्त्व देता है कुछ विद्वान राजनीतिक दृष्टि से देखते हैं। समग्रतः विकास बहुआयामी एवं गतिशील अवधारणा है जिसमें निश्चित समाज क्षेत्र या जनसमुदाय की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आवश्यकताओं की ध्यान मे रखा जाता है।

'विश्व में विभिन्न देशों में विकास के भिन्न मॉडल अपनाये जाते हैं। ओ. पी गाबा के अनुसार इनमें ' उदारवादी दृष्टिकोण, समाजवादी दृष्टिकोण प्रमुख हैं तथा इस दोनों का एक विकल्प गांधीवादी प्रतिरुप है। उदारवादी दृष्टिकोण, जिसको बाजार समाज प्रतिरुप के रुप में भी जाना जाता है, इसमें व्यक्ति को स्वायत्त इकाई माना जाता है तथा मानवीय क्षमताओं के लिए वह समाज का ऋणी नहीं है। वह इन क्षमताओं का पूर्ण उपयोग करने के लिए स्वतंत्र है। इस धारणा को स्वत्वमूलक व्यक्तिवाद की संज्ञा दी। बाजार समाज प्रतिरुप ओद्योगिकरण को विकास की आवश्यकताएँ पूरी करने का साधन मानता है। अतः यह प्रकृति की रक्षा करने के प्रति उदासीन है। समाजवाद पर आधारित विकास के अन्तर्गत व्यक्ति को स्वायत्त नहीं माना जाता है बल्कि उसे समाज पर आश्रित मानते हुए उससे सामाजिक उत्तरदायित्व के निर्वाह की माँग की जाती है। उसकी नागरिक स्वतन्त्रताओं की अपेक्षा सामाजिक आर्थिक अधिकारों पर बल दिया जाता है जिसमें रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा ओर सामाजिक सेवा व सामाजिक सुरक्षा का अधिकार प्रमुख है। समाजवादी प्रतिरुप में विकास का ध्येय प्रत्येक

व्यक्ति को उपयुक्त रहन सहन व जीवन स्तर उपलब्ध करवाना है ताकि वह समाज की सेवा कर सके। साथ समाजवादी मॉडल औद्योगीकरण को भी आवश्यक मानता है ताकि मनुष्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। यह भी प्रकृति को मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन मानते हैं।'[4]

गांधीजी भारत की उन्नति के लिए उसे पश्चिमी सभ्यता के ढाँचे में नहीं ढालना चाहते थे उनका दृढ विश्वास था कि पश्चिमी सभ्यता मनुष्य को उपभोक्तावाद का रास्ता दिखाकर नैतिक पतन की और ले जायेगी, नैतिक उत्थान का रास्ता आत्म संयम और त्याग भावना की माँग करता है। जैसा कि गांधीजी ने यंग इण्डिया में 1927 में लिखा था – 'मैं यह नहीं मानता कि इच्छाओं को बढाने या उनकी पूर्ति के साधन जुटाने से संसार अपने लक्ष्य की और कदम बढ़ा पाएगा। आज की दुनिया में दूरी और समय के अंतराल को कम करके, भौतिक इच्छाओं को बढाने और उनकी वृद्धि के लिए धरती का कोना–कोना छान मारने की जो अंधी दौड़ चल रही है, वह मुझे बिल्कुल पसंद नहीं। यदि आधुनिक सभ्यता के यही लक्षण है तो मैं इसे शैतानी सभ्यता कहूँगा।'[5]

गांधीजी विकास की ऐसी किसी भी अवधारणा के विरुद्ध थे जिसका लक्ष्य भौतिक इच्छाओं को बढ़ाना और उनकी पूर्ति के उपाय ढूँढना हो। वे मनुष्य के चरित्र को इतना उन्नत करना चाहते थे कि वह भौतिक इच्छाओं का दमन करके अपने मन को वश में कर ले। उन्होंने तर्क दिया कि पश्चिम में जब लोग जनसाधारण की दशा सुधारने की बात करते हैं तो उनका लक्ष्य उसके जीवन स्तर को उन्नत करना होता है। परन्तु सच्चे अर्थो में मनुष्य का जीवन स्तर उसकी अतंरात्मा से निर्धारित होता है बाह्य परिस्थितियों से नहीं । इसके लिए मनुष्य को अपने कर्त्तव्य का ज्ञान प्राप्त करने एवं पालन करने के प्रेरणा देनी होगी। ताकि वह ईश्वर कि निकट पहुँच सके। मनुष्य भौतिक इच्छाओं की पूर्ति के साधन जुटाने से केवल नैतिक पतन की ओर जाता है। गांधीजी के अनुसार मनुष्य को भौतिक वस्तुओं का उतना ही उपभोग करना चाहिए जितना उसके शरीर को स्वस्थ रखने के लिए अनिवार्य हो, उससे अधिक की इच्छा मनुष्य को मोह माया भ्रम जाल में फँसा देती है। भौतिक इच्छाएँ कभी शान्त नहीं होती। उनकी तृप्ति का प्रयास करने से वो ओर भी उत्तेजित होंगी। दूसरी ओर इच्छाओं को संयत रखने से दो उद्देश्यों की सिद्वि होगी। इससे सामाजिक न्याय को बल मिलता है तथा मनुष्य का नैतिक चरित्र उन्नत होता है।

गांधीजी ने विकास का जो मार्ग दिखाया है वह मनुष्य के स्वभाव और चरित्र को नए साँचे में ढालने पर बल देता है। 'गांधीजी ने शरीर श्रम के सिद्वान्त के अन्तर्गत यह शिक्षा दी की प्रत्येक मनुष्य को उपयुक्त शारीरिक श्रम करके अपने उपभोग की वस्तुओं के उत्पादन में योग देना चाहिए। इससे न केवल लाखों करोड़ों लोगों की आवश्यकताएँ पूरी होगी बल्कि समाज में श्रम की गरिमा भी बढ़ेगी। गांधीजी ने श्रम को सारे सामाजिक कार्यक्रम की कुंजी मानते हुए ऐसी अर्थव्यवस्था का समर्थन किया जिससे भारत की विशाल जनसंख्या को उपयुक्त श्रम में लगाया जा सके। प्रत्येक व्यक्ति को श्रम का इतना फल अवश्य मिलना चाहिए कि वह अपने जीवन को उन्नत बना सके। अतः गांधीजी ने प्रौद्योगिक प्रधान उद्योगों के मुकाबले श्रम प्रधान उद्योगों को वरीयता प्रदान की। उन्होंने पूँजी उत्पादन की बजाय जनपुँज उत्पादन प्रणाली को उचित ठहराया। उन्होने विशेष तौर से कुटीर उद्योगों के विस्तार कर समर्थन किया।'[6]

'गांधीजी का कहना था कि वास्तविक विकास के लिए हमें गाँवों का पुनर्निर्माण करना होगा। गाँवों के बिना भारत का विकास संभव नहीं है। गांधीजी प्रत्येक गाँव को आदर्श व आत्मनिर्भर बनाना चाहते थे। परन्तु बढ़ती यांत्रिकता एवं पश्चिमीकरण के प्रभावस्वरुप ग्रामीण जीवन संकट में फँस गया है। वे मानते हैं कि ग्रामीण श्रम के इस प्रकार उठ जाने से ग्रामवासी कंगाल हो रहे हैं और धनी लोग मालदार बन रहे हैं। अगर काफी लंबे समय तक यह क्रम चलता रहा तो गाँव बगैर प्रयत्न के नष्ट हो जायेंगे।'[7]

हालांकि वे इस सच्चाई से भलीभाँति परिचित थे कि मात्र कुटीर उद्योग से ही तीव्र गति का विकास संभव नहीं है। इसलिए वे राष्ट्रीय महत्त्व के उद्योगों के संदर्भ में उदार व लचीली नीति को अपनाने के पक्षधर थे। वे बेरोजगारी को दूर करने के लिए श्रम प्रधान तकनीकी को अपनाना बेहतर समझते थे। वे कहते हैं कि 'जब हम गाँवों में बनी वस्तुओं को पसन्द करने लगेंगे और पश्चिम में बनी चीजें हमें नहीं जँचेंगी तो हम उसी राष्ट्रीय अभिरुचि का विकास करेंगे जो गरीबी, भुखमरी और आलस्य या बेकारी से मुक्त कर नये हिन्दुस्तान के आदर्श के मेल खाएगी।'[8]

गांधीजी ने ग्रामस्वराज्य को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। उन्होंने शहरों से दूर आश्रमों की स्थापना करके यह प्रमाणित किया कि यदि भारत को स्वतंत्र रहकर विकास करना है तो इसका एक उपाय गाँव की संरचना है। भारत में आजादी से पहले और आजादी के बाद सरकारी एवं गैर सरकारी दोनो स्तरो पर ग्राम संरचना का कार्य प्रारम्भ किया था। कृषि कुटीर उद्योग ग्रामीण स्वास्थ्य शिक्षा मनोरंजन आदि कार्यक्रम चलाये गये जो कि बहुत व्यापक नहीं थे, पर शुरुआती विकास के लिए उनका महत्त्व कम नहीं था। गांधीजी उपयोग आधारित कल्याण के आलोचक थे। उन्होंने कहा था कि पश्चिमी सभ्यता में जीवन का लक्ष्य शारीरिक कल्याण है। वे न तो अध्यात्म न ही धर्म को महत्त्व देते हैं। गांधीजी के अनुसार भौतिक कल्याण एक कमी न खत्म होने वाला जंजाल था'।[9]

विकास को लेकर गांधीजी का दृष्टिकोण अलग था। ' वे पश्चिम के विकासवादी विकल्पों पर कम बल्कि भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति में मौजूद विकल्पों को ज्यादा महत्त्व देते हैं। वे ऐसे विकास को ज्यादा महत्त्वपूर्ण मानते हैं जो भौतिकता से रहित हो आध्यात्मिकता से प्रेरित होने के कारण सत्याग्रह नैतिक साधन न्यासिता हृदय परिवर्तन तथा शांतिपूर्ण विकास को महत्त्वपूर्ण माना है। कुछ चिंतकों का मत है कि इक्कीसवीं शताब्दी में विकसीत देशों में गांधीजी के नैतिक विचार एक प्रतिमान के रुप में स्वीकार किये जायेंगे। आज विश्व निर्माण के जो प्रचलित प्रतिमान हैं। वे तीसरे विश्व के लिए जरुरी नहीं। यदि इन प्रतिमानों का हम अनुकरण करते हैं जो विकासशील देश कभी भी विकसित देश नहीं बन सकता। विकसित देश अपनी तकनीक के कारण हमेशा विकसित होता जायेगा और विकासशील देश की प्रगति धीमी गति से हागी। गांधीजी ने कभी भी तकनीकी उपादेयता को नकारा नहीं। लेकिन उनकी उपयोगिता को बढ़ा–चढ़ाकर कहना ठीक नहीं है। प्रदूषण, जनसंख्या वृद्धि समस्त सभ्यता को विनाश की ओर खींच रहे हैं। तकनीकी प्रतिमान पूरी विश्व व्यवस्थाओं को प्रभावित कर रहा है। आज विश्व गरीबी की चक्की में पीस रहा है। भारत में तो 80 प्रतिशत जनता गरीबी की सीमान्त रेखा से नीचे अपना जीवन यापन कर रही है, आर्थिक सहायता, व्यापार, तकनीकी सहायता के बावजुद गरीब देश गरीब ही है। वर्तमान में जो विकास का प्रतिमान स्थापित है इसमें विकसीत देशों का व्यापारिक, राजनीतिक, व्यावयायिक सांस्कतिक वर्चस्व बना हुआ है। आज विकास के कारण वातावरण में प्रदूषण बढा है वह अप्रत्याशित है। इसके कारण ऐसा समय आयेगा जिसमें दफ्तरो में बीमार चेहरे सडकों पर रोगी व्यक्ति, खेतों में बीमार किसान नजर आयेगा'।[10]

गांधीजी का स्वदेशी के संदर्भ में विचार था कि 'लोग केवल अपने देश में बनी वस्तुओं का प्रयोग करे और यहाँ की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करे तथा लोगों को रोजगार मिले एवं उनका विकास हो इसका सांकेतिक अर्थ है कि लोग अपनी संस्कृति ओर स्वाधीनता के साथ लगाव अनुभव करे ताकि वे विकास के पथ में यूरोपिय विचारों ओर संस्थाओं का अंधानुकरण न करने लगे'।[11]

प्रशासनिक स्तर पर गांधीजी ने विस्तृत विकेन्द्रीकरण का समर्थन किया। छोटी– छोटी इकाइयाँ अपने से ऊँची इकाई के लिए अपने अपने प्रतिनिधि चुनकर भेजेगी जिसके कारण प्रत्येक स्तर में लोगों के भागीदारी मिलेगी। 'गांधीजी केन्द्रीय विधानसभा के लिए प्रत्यक्ष चुनाव के विरुद्ध थे क्योकि उसमें उत्तरदायित्व की भावना का ह्रास होगा तथा भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलेगा। गांधीजी का विश्वास था कि इस तरह की राज्य व्यवस्था को विस्तृत अधिकारीतंत्र की जरुरत नहीं होगी क्योंकि इसमें अधिकांश निर्णय प्रक्रिया विक्रेंद्रीकृत होगी। गांधीजी ने इस व्यवस्था को सच्चा लोकतंत्र कहा ओर यह माना कि ऐसी व्यवस्था मे प्रत्येक व्यक्ति का विकास होगा। 1940 में उन्होंने हरिजन के अन्तर्गत लिखा था कि उन गिने लोगों को सत्ता प्राप्त हो जाने से सच्चा स्वराज नहीं आयेगा। इसके लिए जरुरी है कि यदि कही सत्ता का दुरुपयोग होने लगे तो सब लोग उसका विरोध करने की क्षमता प्राप्त कर ले स्वराज यह माँग करता है कि सांस्कृतिक दृष्टि से हमारा अपना एक घर होना चाहिए जो हमे सुरक्षा प्रदान करे परन्तु उस घर की खिड़कियाँ और दरवाजे खुले रखे जायें ताकि उसमें सब ओर से उत्तम विचारों की ताजा हवा आती है अन्यथा उसमें घुन पैदा हो जाएगी और दुर्गंध आने लगेगी तथा विकास की जगह पतन शुरु हो जाएगा'।[12]

भारतीय संदर्भ में स्वराज ऐसी व्यवस्था है जिसमें सब लोग कंधे से कंधा मिलाकर राष्ट्र के निर्माण में योग देते हैं। इसमें निर्धन से निर्धन मनुष्य अपनापन और देश के निर्माण में योगदान को महसूस करता है। यह हरेक आँख से हरेक आंसू पोंछने के अवसर के रूप में देखा गया। स्वराज के चिंतन में व्यक्ति के मुकाबले समाज को ऊँचा स्थान दिया गया है और भौतिकवाद के मुकाबले आध्यात्मवाद को वरीयता दी

गई है। 'गांधीजी ने विकास का जो मार्ग दिखाया, वह भारत की संस्कृति और मूल्य परंपरा के अनुरूप था। परन्तु इस देश को प्रौद्योगिकी प्रधान और तनाव भरे विश्व में अपना उपयुक्त स्थान प्राप्त करने के लिए इससे भिन्न रास्ता चुनना पड़ा। गांधीजी ने विकास का जो पथ बताया है उसमें मानवता के भविष्य की रक्षा के लिए पर्यावरणवाद का महत्त्वपूर्ण सिद्धांत बन चुका है'। [13]

आज के परिदृश्य के संदर्भ में विकास का स्वरूप असन्तुलित, असमान एवं भेदभावपूर्ण लगता है। वर्तमान में विकास का स्वरूप गांधीजी के बताए मार्ग से दूर हटता दीख रहा है। गांधीजी का विचार था कि 'विकास के आधार को, सिद्धांत का स्वीकार आवश्यक है। इस परिस्थिति में हम अपने संविधान के जो चार मूल सिद्धांत है उन्हें विकास के उद्देश्य के रूप में स्वीकार कर सकते है। स्वतंत्रता, समानता बंधुता और न्याय'।[14]

वर्तमान में विकास को औसत से मापते हैं चाहे राष्ट्रीय आय हो या राष्ट्र की जी.डी.पी. और लगता है कि देश में काफी विकास हुआ है। जबकि औसत निकालने से वास्तविकता का पता नहीं चलता। इसमें अन्तिम पंक्ति के व्यक्ति पर ध्यान केन्द्रित नहीं किया जाता है। विकास का औसत निकालने का तरीका समाज को भयानक परिणाम देता है। इसीलिए गांधीजी ने कहा 'विकास सारे समाज का करना है और आरंभ करना है अंत्योदय से। जब तक सर्वोदय एवं अंत्योदय जुडेगी नहीं तब तक विकास अधूरा रहेगा। विकास तो पूरे समाज का होना है केवल अंतिम जन का नहीं। हां प्रारंभ अंत्योदय से, अंतिम व्यक्ति के विकास से अवश्य करना है।'[15] वर्तमान में विकास एक बहुत बडी चुनौती है। छतीसगढ़, झारखण्ड, उड़ीसा, आन्ध्रप्रदेश आदि कई राज्यों में 'एक तरफ खनिज है जिसके उपयोग दोहन का अधिकार एम.एन.सी. को दिया जा रहा है। दूसरी तरफ मनुष्य है जो हजारों साल से वहाँ रह रहा है। जीवन जी रहा है, उसे निकम्मा मान लिया गया है, उसे विस्थापित किया जा रहा है। इन बातों पर विचार करते हुए इस बात को स्वीकार करना होगा कि इसमें मनुष्य कहाँ है? विकास की इस अवधारणा में मनुष्य नहीं दिखता। विकास का आधार क्या है, मनुष्य या साधन ? जो कुछ भी हम बना रहे हैं निर्माण कर रहे हैं इसमें उद्देश्य क्या है, आधार क्या है? तो यह बात साफ होनी चाहिए कि विकास की अवधारणा में मनुष्य ही आधार होना चाहिए।' [16] यहाँ कारण स्पष्ट है कि गांधीजी ने विकास की अवधारणा में मनुष्य को आधार माना और सर्वहित को ध्यान में रहकर विकास का उद्देश्य लक्ष्य एवं कार्यक्रम निश्चित करने की बात की। उनके विकास का प्रतिरूप पर्यावरण के अनुकूल था जबकि उनके बाद विकास का मॉडल पर्यावरण की अनदेखी करता है। 'पर्यावरण व जलवायु परिवर्तन तथा ग्लोबल वार्मिंग के संकेत 18वीं शताब्दी से ही मिलने शुरू हो गये जब दुनिया में औद्योगिक क्रांति की शुरूआत हुई थी। इसके बाद हम विकास के वीभत्स चक्रव्यूह में फसते चले गये जिसके कारण ग्लेशियर पिघलते हैं तापमान बढ़ रहा है। अगर सब कुछ ऐसा ही रहा तो वर्ष 2100 तक समुद्रतल एक से चार फीट बढ जायेगा तथा तटवर्ती इलाकों के डूबने का खतरा मंडराने लगेगा एवं ज्वारभाटा तथा समुद्री तूफान की आवृत्ति बढ़ जायेगी।'[17] अंधाधुध विकास के कारण भू–जल भी खतरनाक स्तर पर पहुँच चुका। इसी संदर्भ में भारत के सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणी उल्लेखनीय है कि ''अगर यही हाल रहा तो ''वर्ल्ड वार छोड़िए दिल्ली में वाटर वॉर होगा''। सुप्रीम कोर्ट ने केन्द्रीय भूजल बोर्ड की उस रिपोर्ट पर गहरी चिंता जताई जिसके अनुसार दिल्ली का भूजल स्तर हर वर्ष 0.5 मीटर से लेकर दो मीटर से भी ज्यादा दर से कम हो रहा है। करीब 90 फीसदी दिल्ली भयावह जल संकट के मुहाने पर है। जल संचय न बढा तो 30 साल बाद यहां का भूजल इस्तेमाल लायक नहीं बचेगा।'[18] भारत विश्व की छठी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। लेकिन हकीकत में आज भी भूख से दम तोड़ते लोग विकास से अछूते हैं। दिल्ली के मंडावली इलाके में तीन बच्चियां इस जुलाई महीने की शुरूआत में अचानक दम तोड़ गयीं। पोस्टमार्टम रिपोर्ट में पता चला कि उनके पेट में अन्न का दाना तक न था। मतलब साफ था भोजन के सांविधानिक अधिकारों से लैंस इन अबोधों को कई दिनों से पेट भरने के लिए कुछ हासिल नहीं हुआ था। शब्दोकोश में दर्ज 'भूख' के अर्थ में अनजान ये अभगिनें जन्म के क्षण से जीने और उसी की वजह से मौत के हवाले होने को अभिशप्त थीं।'[19] वर्तमान में विकास को मशीनीकरण और औद्योगीकरण से जोड़ा जाता है जो विकास का एकआयामी विचार है। इसके दूसरे पहलू को नहीं देखा जाता है। गांधीजी ने *हिन्द स्वराज* में स्पष्ट किया है कि मशीनीकरण से अनेक बुराइयाँ समाज में पनपती हैं और वे भविष्य में खतरे पैदा करेंगी।

प्रायः यह मान जाता कि जब शिक्षा का प्रसार होता है तब मानव के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक दृष्टिकोण का व्यापक विकास होता है। गांधीजी ने भी कहा है कि '' ज्यों–ज्यों सही ज्ञान बढ़ेगा त्यों–त्यों हम समझते जायेंगे कि हमें पसन्द न आने वाला धर्म दूसरा व्यक्ति पालता है तो भी उससे वैरमान रखना हमारे लिए ठीक नहीं है। हम उस पर जबरदस्ती न करें ''।[20] लेकिन वर्तमान के विकास युग में उल्टा हो रहा है। इसका प्रभाव हमें इन घटनाओं से मिलता है। प्रख्यात शिक्षा विद्य और तर्कवादी एम.एम. कलवूर्गी, सामाजिक कार्यकर्त्ता गोविन्द पानसरे, पत्रकार गौरी लंकेश, सामाजिक कार्यकर्ता तर्कवादी दाभोलकर आदि की हत्या सिर्फ इसलिए कर दी जाती है कि कुछ लोग इनके विचारों से सहमत नहीं थे। अधूरे विकास के कारण आज मिथ्या राष्ट्रवाद व मॉब लिंचिंग जैसी घटनाओं की आवृत्ति हो रही है।

आधुनिक मानव ने जीवन के हर क्षेत्र में विकास किया है जिसमें वैज्ञानिक, तकनीकी, आर्थिक, शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक क्षेत्र शामिल है। आज विश्व में बेहतरीन स्वास्थ्य सुविधाएँ, शिक्षण संस्थाएँ, सूचना तकनीक आदि उपलब्ध हैं। मानव ने हर क्षेत्र में प्रकृति के नियमों का ज्ञान प्राप्त करके अपने निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उनका व्यवस्थित प्रयोग किया है। इसी कारण मानव आज सूर्य, चन्द्रमा, मंगलग्रह आदि तक पहुँच गया है और अपने जरूरत की हर वस्तु तैयार कर लेता है – चाहे कृत्रिम वर्षा हो, खाद्य पदार्थ हो या अन्य आवश्यक सामग्री हो। यहाँ तक कि मनुष्य विज्ञान के जरिये अपने जैसा मानव भी तैयार कर लेता है। लेकिन इस विकास की दौड़ में हमें मानवता, उपाश्रित वर्ग, वंचित वर्ग, महिलाओं, बच्चों, पर्यावरण एवं नैतिकता को भी शामिल करना पड़ेगा। तभी हम सच्चे अर्थों में विकास का लाभ सारी मानव जाति तक पहुँचा पायेंगे। आज इसे ही विकास का आधार और उद्देश्य मानने की आवश्यकता है। अमीर एवं गरीब विश्व अलग–अलग रहकर लम्बे समय तक जिन्दा नहीं रह सकते। एक खुशहाल विश्व का निर्माण तभी हो सकता है जब विश्व के विभिन्न देशों की पारस्परिक आर्थिक क्रियाएँ, न्याय, समानता, औचित्य और शोषण रहित समाज पर आधारित हो।

संदर्भ ग्रंथ

1. ओ.पी.गाबा : *विवेचनात्मक सामाजिक विज्ञानकोष,* मयूर पेपरबैक्स, नोएडा, 1952,पृष्ठ सं 45
2. डा. विष्णु गोपाल : *आर्थिक विकास की समस्याएँ*
3. अमर्त्य सेन : *आर्थिक विकास एवं स्वातंत्र्य,* पृष्ठ 19
4. ओ.पी. गाबा : राजनीति विज्ञान विश्वकोश, पृष्ठ 205
5. महात्मा गांधी : *यंग इण्डिया*
6. ओ.पी. गाबा : राजनीति विज्ञान विश्वकोश, पृष्ठ 206
7. महात्मा गांधी : *हरिजन सेवक* , 26 जून 1926, पृष्ठ सं. 14
8. डा. गुरुदेव उपाध्याय : *ग्रामीण विकास एवं अर्थ नीति,* पृष्ठ सं. 23
9. भरत झुन्झुनुवाला : *भारतीय अर्थव्यवस्था,* पृष्ठ सं. 9
10. रमेश सक्सेना : *गांधी : एक अध्ययन,* पृष्ठ सं. 200
11. ओ.पी. गाबा : राजनीति विज्ञान विश्वकोश, पृष्ठ 206
12. *वही*
13. ओ.पी. गाबा : राजनीति विज्ञान विश्वकोश, पृष्ठ 207
14. डा. अवधप्रसाद सिन्हा : *हिन्द स्वराज की प्रासंगिकता,* पृष्ठ सं. 63
15. डा. अवधप्रसाद सिन्हा : *हिन्द स्वराज की प्रासंगिकता,* पृष्ठ सं. 67
16. डा. अवधप्रसाद सिन्हा : *हिन्द स्वराज की प्रासंगिकता,* पृष्ठ सं. 71
17. *हिन्दुस्तान,* नई दिल्ली, 10 मई 2018, पृष्ठ सं. 10
18. *वही*
19. *हिन्दुस्तान* , नई दिल्ली, 29 जुलाई 2018, पृष्ठ सं. 12
20. महात्मा गांधी : *हिन्द स्वराज्य,* नवजीवन प्राकशन, अहमदाबाद, 1952, पृष्ठ सं. 34